पाठ ४

कर्ण का मित्र प्रेम

MIND MAP

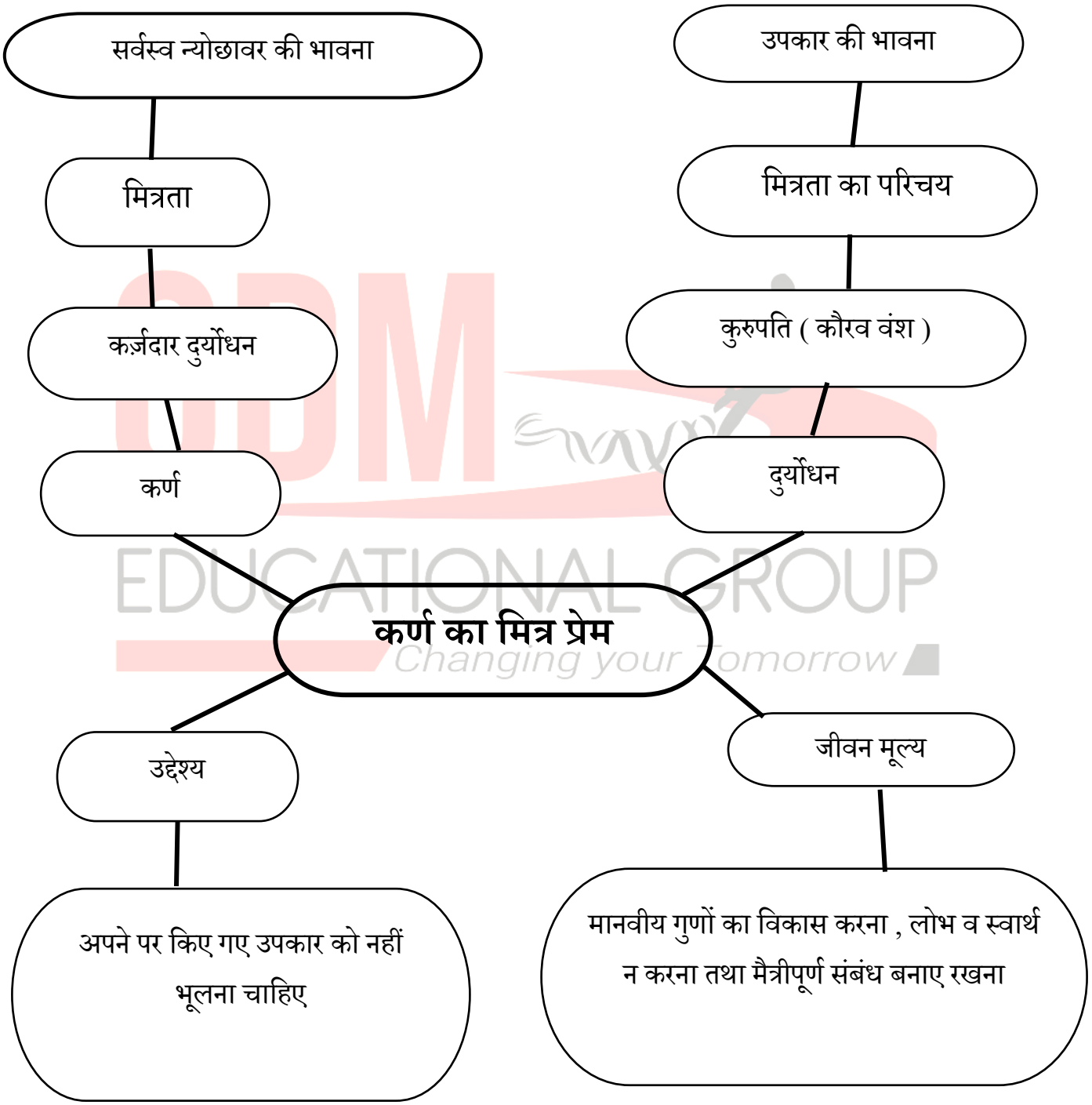

ODM EDUCATIONAL GROUP Changing your Tomorrow

पाठ ४

कर्ण का मित्र प्रेम

STUDY NOTES

पाठ प्रवेश

हमें किसी को भी अपने पर किए गए उपकार को नहीं भूलना चाहिए। सांसारिक सुख एवं धन क्षणिक हैं। कुछ समय के बाद ये समाप्त हो जाते हैं। अतः किसी भी तरह के व्यक्तिगत स्वार्थ व लाभ के लिए हमें अपनी सहायता करने वालों का साथ नहीं छोड़ना चाहिए।

पाठ का सार

इस कविता में कवि ने संसार की सभी उपलब्धियों को मित्र-धर्म के पालन की तुलना में नगण्य बताया है। महाभारत में कर्ण की बहादुरी एवं शौर्य के कारण श्रीकृष्ण स्वयं आकर कर्ण से कहने लगे कि तुम पांडवों के भाई हो तुम उन्हीं की ओर से युद्ध करो। यह न्याय संगत है , परंतु श्रीकृष्ण की बातों से कर्ण जरा-सा भी विचलित नहीं हुआ एवं श्रीकृष्ण की बातों को सुनने के बाद बोला कि मैं तो विवशतापूर्ण जीवन जीव व्यतीत करने के लिए विवश था। दुर्योधन ने ही मेरा हाथ थामा और एक राजा की तरह मुझे सम्मान दिया। सूर्य और चंद्रमा भी इस बात के प्रमाण हैं। दुर्योधन के प्रति अपनी कृतज्ञता को व्यक्त करते हुए कर्ण ने कहा - कि मेरा रोम -रोम दुर्योधन का ऋणी है। मैं स्वर्ग छोड़ सकता हूँ, परंतु दुर्योधन को नहीं। जिसने मुझे सहारा दिया है , मेरी सुरक्षा की है अपने प्राण देकर भी मैं उसे बचाऊँगा। मित्रता एक ऐसा रत्न है जिसका मूल्य आँका नहीं जा सकता। कर्ण ने मित्रता को महत्व देते हुए श्रीकृष्ण से कहा - कि ज़मीन की बात तो छोड़ दीजिए। यदि स्वर्गलोक भी मुझे मिल जाए तो उसे भी मैं दुर्योधन के चरणों में समर्पित कर दूँगा। इस पाठ में कवि ने कर्ण के मित्र के प्रति अटल प्रेम को व्यक्त किया है।